शिवभक्त गोरखनाथ

भारत के धार्मिक आचार्यों की परम्परा में गोरखनाथ का एक विशिष्ट स्थान है। वे मध्यकाल के एक महान् योगी और सुप्रसिद्ध महापुरुष थे। उनकी विशिष्ट दार्शनिकता को, जिसमें पातंजल-योग, शैवमत, कौलमत तथा हठयोग का सुन्दर समन्वय था, ध्यान में रखते हुए रांगेय राघव सदृश विद्वानों ने उनको शंकराचार्य के समकक्ष माना है। गोरखनाथ की गणना वज्रयानी बौद्धों के चौरासी सिद्धों में की जाती है। ये एक सिद्ध ही नहीं थे, अपितु आधूनिक हठयोग के जन्मदाता भी थे। भारत के अनेक स्थान उनके मठों, मन्दिरों तथा समाधिस्थलों आदि से भरे पड़े हैं।

गोरखनाथ का जन्म कब और कहाँ हुआ, यह एक विवाद-ग्रस्त विषय है। कुछ लोग, जैसे रांगेय राघव, उनका जन्म उत्तर-पश्चिम का पंजाब, जो आज गोरखपुर के नाम से जाना जाता है, मानते हैं। कुछ उन्हें बंगाल-निवासी बताते हैं। "योगी सम्प्रदायाविष्कृति" के अनुसार उन्हें गोदावरीतीर के किसी चन्द्रगिरी नामक स्थान में उत्पन्न बताया गया है। "गोरक्ष सहस्त्रनाम-स्तोत्र" के आधार पर दक्षिण दिशा में बड़व नामक देश में महामन्त्र के प्रसाद से गोरखनाथ का प्रादुर्भाव माना जाता है। एक प्रचलित परम्परा के अनुसार गोरखनाथ सतयुग में पंजाब के पेशावर में, त्रेता में गोरखपुर में, द्वापर में हुरमुज में तथा कलियुग में गोरखमठी में उत्पन्न हुए थे। संक्षेप में अधिकांश विद्वान् उन्हें पश्चिमी भारत अथवा पंजाब में पैदा हुआ मानते हैं।

जन्मस्थान की भाँति उनके जन्म के विषय में भी अनेक मत एवं किवदंतियां प्रचलित हैं। "योगी सम्प्रदायाविष्कृति" के अनुसार मत्स्येन्द्रनाथ ने सुराज नामक ब्राह्मण को एक चुटकी राख दी, जिसके फलस्वरूप गोरखनाथ उत्पन्न हुए। कोई-कोई यह कहते हैं कि निराकार ने गोरक्ष को भूस्वेद से बनाया। "कौलज्ञान निर्णय"[1] की एक कथा के अनुसार पार्वती ने शिव द्वारा अपने एक भक्त को भस्म दिलवायी। भक्त की पत्नी ने भस्म फेंक दी। उस भस्म द्वारा गोबर में एक बालक की उत्पत्ति हुई। भगवान् शिव उस भक्त को देखने गये। उन्हें गोबर में जो बालक मिला, वह गोरक्षनाथ कहलाया। गोरखनाथ के जन्म-समय के भी संबंध में विवाद है। अत: उन्हें नवीं से 12वीं सदी के बीच पैदा हुआ माना जाता है। वारकरी सम्प्रदाय के प्रमुख सन्त ज्ञानेश्वर अपनी गुरुपरम्परा में गोरखनाथ का उल्लेख करते हैं। ज्ञानेश्वर का समय तेरहवीं शताब्दी मानी गया है। ज्ञानेश्वर ने भगवद्गीता की टीका में अपनी गुरु परंपरा में गोरखनाथ का तीसरा स्थान माना है। परम्परा इस प्रकार है-आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ, गहिनीनाथ, निवृतिनाथ तथा ज्ञाननाथ(अर्थात् ज्ञानेश्वर)। इस परम्परा के अनुसार गोरखनाथ का समय बारहवी शताब्दी का आरंभ माना जाता है।

---

1. डॉ० प्रबोध चन्द्र बागची; कौलज्ञान निर्णय

कुछ लोग गोरखनाथ को ब्राह्मण तो कुछ तेली तो कुछ जुलाहा मानते हैं।[1]

गोरखनाथ सुप्रसिद्ध कौल [2] ज्ञानी मत्स्येन्द्रनाथ के प्रमुख शिष्य थे। वारकरी सम्प्रदाय के प्रवर्तक "आदिनाथ" माने जाते हैं। नाथ सम्प्रदाय के प्रवर्तक भी अपनी गुरु-परम्परा का आरंभ आदिनाथ से मानते हैं। "आदिनाथ" कौन थे, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता, परन्तु धार्मिक विश्वास के आधार पर "आदिनाथ" 'भगवान् शिव' माने गये हैं। "गोरख विजय" की एक कथा में भगवान् शिव का उल्लेख है, जिन्हें "आदिनाथ" माना गया है। एक बार शिवजी पार्वती को जीवन-मृत्यु- संबंधी महाज्ञान का उपदेश दे रहे थे। ऐसी मान्यता थी कि इस उपदेश को जो कोई सुनता है, उसे देवताओं पर वशीकरण की शक्ति प्राप्त हो जाती है और उसमें मरे हुए को भी जिन्दा करने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है। कहा जाता है कि जिस समय शिव और पार्वती इस वार्ता में निमग्न थे मत्स्येन्द्रनाथ वहीं तप कर रहे थे। अर्थात् मत्स्येन्द्रनाथ उनके उपदेश को सुन रहे थे। जब शिवजी को यह ज्ञात हुआ तो उन्होंने मत्स्येन्द्रनाथ को शाप दिया कि वह स्त्री की माया में फँसकर इस महाज्ञान को भूल जायँगे। उन्होंने यह ज्ञान अपने शिष्य गोरखनाथ को दे दिया। मत्स्येन्द्रनाथ शापवश कदलीवन में स्त्रियों के माया-जाल में फँसकर रह गये। गोरखनाथ ने उन्हें इस माया-जाल से मुक्त कराया। 'गोरखवाणी' (डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल) के आधार पर यह ज्ञात होता है कि लोकमर्यादा की दृष्टि से ही गोरखनाथ ने मत्स्येन्द्रनाथ को अपना गुरु बनाया था। गोरखनाथ का विचार है कि यदि वे ऐसा न करते तो गुरुहीन पृथ्वी प्रलय में चली जाती। 'गोरखविजय' की कथा से भी यही ध्वनित होता है कि आत्मबल एवं सयंम में गोरखनाथ अपने गुरु से भी अधिक दृढ़ थे।

'कौलज्ञान निर्णय' की उपर्युक्त कथा में आगे कहा गया है कि गोबर में उत्पन्न बालक गोरख को शिवजी ने गुरु ढूँढ़ने भेजा। गोरखनाथ ने समुद्र में पीपल के पत्ते पर रोटी अर्पित की। उसे राखो नामक मत्स्य ने खा लिया और बारह वर्ष बाद एक बालक को जन्म दिया, जो शिव की आज्ञा से मत्स्येन्द्रनाथ नाम से गोरखनाथ के गुरु हुए। नाथ सम्प्रदाय के नौ योगी प्रमुख माने गये हैं। इन सुप्रसिद्ध नौ नाथों तथा चौरासी सिद्धों का उल्लेख अनेक परवर्ती साहित्य में पाया जाता है। ये नौ नाथ इस प्रकार हैं- आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ, गहिनीनाथ, चर्पटनाथ, चौरंगीनाथ, बालेन्द्रनाथ, भर्तृनाथ (भर्तृहरि) एवं गोपीचन्द।

गोरखनाथ का व्यक्तित्व बड़ा भव्य था। सिर पर जटायें रखते तथा माथे पर भस्म रमाते। वे भांग आदि व्यसनों से दूर रहते थे। मद्य-मांस का भक्षण उनके निकट त्याज्य था। उन्होंने

1. 'गोरख दर्शन', जो सरस्वती सहगल द्वारा लिखित तथा 1979 में हैदराबाद से प्रकाशित है, के पृ. 4 को देखें।
2. 'कौल' तान्त्रिकों का एक सम्प्रदाय विशेष था।

हठयोग-प्रदीपिका, सिद्ध-सिद्धान्त-पद्धति तथा गोरक्ष शतक आदि अनेक ग्रन्थों की रचना की। उन्होंने अपने जीवन में काफी भ्रमण किया था। स्थान-स्थान पर स्थापित उनके मठ तथा मंदिर उनकी यात्राओं के परिचायक हैं। वे जहाँ जाते अपना प्रभाव छोड़ जाते।

गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित मत सिद्धमत, सिद्धमार्ग, योगमार्ग, अवधूतमार्ग तथा अवधूत सम्प्रदाय आदि के नाम से भी विख्यात है। नाथ सम्प्रदाय के कुछेक योगियों ने अपने मतानुसार अनेक नये सम्प्रदायों की स्थापना की किन्तु इन सबके मुख्य प्रवर्तक गोरखनाथ ही माने गये हैं। गोरखनाथ के सम्प्रदाय के विषय में भी विद्वानों में काफी भेद है। कहा जाता है कि वे आरम्भ में वज्रयानी(बौद्ध) साधक थे और बाद में शैव हो गये। गोरखनाथ की गुरु-परम्परा के अनुसार नाथ सम्प्रदाय का प्रवर्तक 'आदिनाथ' अथवा भगवान् शंकर को ही माना गया है, किन्तु इसके पुनरुत्थान का श्रेय गोरखनाथ को ही दिया गया है। इस सम्प्रदाय का उदय सिद्धों की वीभत्स एवं तामसिक साधना-पद्धति की प्रतिक्रिया के रूप में हुआ है, इसी कारण इसमें आचरण-प्रधानता की झलक मिलती है। गोरखनाथ का योगमार्ग किसी न किसी रूप में शैव, पाशुपत, लकुलीश तथा कापालिक मत से प्रभावित है। उन्होंने योगमार्ग को एक व्यवस्थित रूप दिया तथा शैव प्रत्यभिज्ञादर्शन (कश्मीरी शैव-दर्शन) के आधार पर योग के साधनों को क्रमबद्ध किया और आत्मानुभुति और शैव-परम्परा के सामञ्जस्य से शरीरस्थ 'चक्रों' की संख्या निश्चित की। दूसरे शब्दों में गोरखनाथ पर शैव-योग परम्परा का काफी प्रभाव था।

गोरखनाथ अपने समय के सर्वाधिक प्रभावशाली व्यक्ति थे। वे पुस्तकीय ज्ञानमात्र से सन्तुष्ट होनेवाले व्यक्ति न थे। उन्होंने साधनापक्ष पर अधिक जोर दिया है। वे आजीवन सही अर्थ में ब्रह्मचारी रहे। यौवनकाल के प्रारंभ से ही उनमें वैराग्य की भावना विद्यमान थी। उन्होंने सुदूर देशों का भ्रमण किया था और प्रसिद्ध सिद्धों का सत्संग उन्हें मिला था। वे गुरुभक्ति, अनुशासन, सेवाभाव तथा सरल सात्त्विक एवं संयमशील जीवन के समर्थक थे। उनके विचारों का प्रभाव अफगानिस्तान, बलूचिस्तान, लंका तथा पेनांग आदि देशों पर भी पड़ा। कालान्तर में उनकी गणना भगवान् शिव के अवतारों में होने लगी।

गोरखनाथ की दार्शनिक विचारधारा

गोरखनाथ की मान्यता के अनुसार शिव परम सत्ता है और समस्त कार्यों की उत्पत्ति और विनाश का हेतु उनकी शक्ति है। शिव एवं शक्ति का नित्य, कालातीत तथा सम्बन्धित रूप ही परम सत्ता है। शिव के अन्दर शक्ति तथा शक्ति के अन्दर शिव उसी प्रकार अन्तर्निहित हैं जिस प्रकार चन्द्र के अन्दर चन्द्रिका। जिस प्रकार चन्द्रमा और उसकी चाँदनी(प्रकाश) में कोई भेद नहीं है उसी प्रकार शिव और शक्ति का अभेद है।

शिवस्याभ्यन्तरे शक्तिः शक्तेरभ्यन्तरे शिवः।

अन्तरं नैव जानीयाच्चन्द्रचन्द्रिकयोरिव।।

(सिद्धसिद्धान्तपद्धति, गोरख दर्शन पृ. 117 से उद्धृत)

गोरखनाथजी कहते हैं कि शिव अनन्य, अखण्ड, अद्वय, अनश्वर, धर्महीन(निर्गुण) तथा निरंग(निरूप या रूपरहित) हैं। शिव का धर्म ही शक्ति है। इस प्रकार समस्त ब्रह्माण्ड का मूल कारण शक्ति है। शक्ति द्वारा ही जगत् की अभिव्यक्ति होती है। अपनी शक्ति से युक्त होने पर शिव सबके आभासक हो सकते हैं।

शिवोऽपि शक्तिरहितः शक्तः कर्तुं न किंचन।

स्वशक्त्या सहितः सोऽपि सर्वस्याभासको भवेत्।।

(सिद्धसिद्धान्तपद्धति 4/13, गोरख दर्शन पृ. 117 से उद्धृत)

जाति, वर्ण, गोत्र, आदि और अन्त से रहित होने के कारण शिव अकुल हैं और शिव की सृष्टि करने की इच्छा शक्ति है, जिसे कुल कहा गया है। इसी कुल में अकुल तथा अकुल में कुल अन्तर्निहित है।

प्रलयकाल में जब शक्ति जगत् के समस्त तत्त्वों को आत्मसात् करके परम शिव में तत्त्वरूप में अवशिष्ट रहती है, तब इस अवस्था में शिव कार्य-कारण के चक्र-संचालन से विमुख होकर अव्यक्तावस्था में लीन रहते हैं। इस अवस्था के विपरीत जब शिव सृष्टि की इच्छा से युक्त होते हैं तब वे सगुण शिव कहलाते हैं और उनकी इच्छा ही शक्ति कहलाती है। इस प्रकार परम शिव तत्त्व (निर्गुण) से सगुण शिव एवं शक्ति दो तत्त्वों की एक साथ उत्पत्ति होती है। दो भिन्न तत्त्व होते हुए भी इनमें वास्तविक रूप से कोई भेद नहीं है।

शक्ति का स्फुरण पाँच विभिन्न अवस्थाओं द्वारा होता है। प्रथमावस्था 'निजा' है, जो परम शिव की अवस्था धर्म से युक्त है तथा जो स्फुरण की पूर्ववर्ती तथा स्फुरित होने के लिये उपक्रान्त अवस्था है। स्फुरणोन्मुखी शक्ति की इस अवस्था में शिव अव्यक्त तथा विशिष्ट रूप में होते हैं। शिव की यह अवस्था अपरंपद्म नाम से अभिहित है। द्वितीय अवस्था में शक्ति का क्रमशः विकास की ओर स्फुरण होता है, जिसे 'परा' कहा गया है। तृतीयावस्था में वह स्पंदित होती है जो 'अपरा' कहलाती है। तत्पश्चात् चतुर्थावस्था में वह अहम् की भावना अथवा अलगाव से युक्त होती है तथा सूक्ष्म अहंता की ओर उन्मुख होती है। इस अवस्था में उसे 'सूक्ष्मा' कहा गया है। अन्तिम अवस्था में वह पूर्णरूप से अपने(शिव) से अलगाव के प्रति सचेत हो जाती है जिसे कुण्डली या कुण्डलिनी कहा गया है।

निजाऽपरापरा सूक्ष्मा कुण्डलिन्यास् पंचधा।

शक्तिचक्र क्रमेणोत्थो जातः पिण्डः परः शिवः।।

(सिद्धसिद्धान्तपद्धति, गोरख दर्शन पृ. 119 से उद्धृत)

गोरखनाथ ने इन अवस्थाओं में शिव को भी भिन्न-भिन्न नामों से अभिहित किया है। उनकी क्रमानुसार अपरंपद्म, परम, शून्य, निरञ्जन तथा परमात्मा के नामों से प्रसिद्धि होती है।

तत्स्व संवेदना मासमुत्पन्नं परमं पद्मं।

स्वेच्छा मात्रं ततः शून्यं सहामात्रं निरञ्जनम्।

तस्माततः स्वसाक्षादभूः परमात्मा पदं मतम्।

(सिद्धसिद्धान्तपद्धति, गोरख दर्शन पृ. 119 से उद्धृत)

इस प्रकार परम शिव(निर्गुण) उपर्युक्त पाँच अवस्थाओं को पार करते हुए सगुण शिव या परमात्मा (प्रथम तत्त्व) के रूप में अभिव्यक्त होता है। इसी के अनुरूप शक्ति भी पाँच अवस्थाओं से गुजरने पर कुण्डली (द्वितीय तत्त्व) या कुण्डलिनी के रूप में प्रकट होती है। समस्त विश्व का कारण यही कुण्डलिनी है। इसका विस्तार समस्त ब्रह्माण्ड में है। शिव इस जगत् की उत्पत्ति, पालन तथा विलयन इसी की सहायता से करते हैं। यह परमात्मा और कुण्डलिनी अथवा सगुण शिव एवं शक्ति प्रथम दो सूक्ष्म तत्त्व हैं। सगुण शिव ही जीवरूप में प्राणियों के अन्दर आभासित होते हैं जबकि जड़ प्रकृति या लोगों का शरीर कुण्डलिनी शक्ति की अभिव्यक्ति है।

तांत्रिकों की भाँति गोरखनाथ ने नाद को शक्ति तथा शिव को बिन्दु माना है। नाद बिन्दु का ही आत्मविस्तार है। गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित हठयोग बौद्धों, शैवों तथा शाक्तों के तांत्रिक कुण्डलिनीयोग का एक परिमार्जित रूप है। ब्रह्मचर्य और काया-साधना गोरखनाथ की मौलिक साधना पद्धति है जो तांत्रिकों में नहीं पायी जाती।

(प्रस्तुत लेख 'गोरख दर्शन' नाम पुस्तक, जो श्रीमती सरस्वती सहगल द्वारा लिखित एवं 1979 में हैदराबाद से प्रकाशित है, पर आधारित है।)

❀❀❀❀❀❀

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।
तस्मात्तदभिसंयोज्य परात्मनि सुखी भवेत्।।

(नार. महापु. पूर्वखण्ड 34/58)

मन ही मनुष्य के बंधन एवं मोक्ष का कारण होता है। अतः मन को परमात्मा में लगाकर सुखी(मुक्त) हो जाना चाहिये।